ISSN No. : 2394-0344 Remarking : Vol-2* Issue-1*June-2015

शास्त्रीय संगीत में संगीत की घरानेदार परम्परा

सारांश

शास्त्रीय संगीत की वर्तमान नीव घराना माना जाती है। जहाँ प्राचीन काल में संगीत को गुरु के द्वारा शिष्य को कठंस्थ कराने की प्रथा थी वहीं कालान्तर में यही गुरु शिष्य परम्परा घराने में परिवर्तित होती चली गई। घरानेदार संगीत का प्रादुर्भाव मुस्लिम सभ्यता के आगमन से माना जाता है। मध्यकाल में घरानेदार संगीत को अत्यधिक प्रचार–प्रसार प्राप्त हुआ। जहाँ कवल प्रत्येक घराने का गुरु अपनी शिक्षा अपने पुत्र या शिष्य को ही देते थे और विशेष कलाकारी अत्यधिक तैयारी, अन्य घरानों से कुछ अलग करके अपने घराने की पुष्ठ नीव रखते थे। शनैः–शनैः यही परम्परा विभिन्न घरानों की जन्मदानी बनी। जिसमें आज वर्तमान में ग्वालियर घराना, लखनऊ घराना, दिल्ली घराना इत्यादि के नामों से संगीत की शिक्षा को शिष्यों में प्रसाद के रुप में वितरण कर रही है। और नित्य प्रतिभाशाली शिष्यों के रुप में समाज म संगीत शिक्षा का प्रकाश फैला रही है।

मुख्य शब्द : शास्त्रीय संगीत, संगीत की घराने।

सुदेश कुमारी
रीडर एवं प्रभारी,
संगीत विभाग,
गोकुलदास हिन्दू महिला डिग्री कॉलेज,
मुरादाबाद

प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही भारतीय शास्त्रीय संगीत में गुरु–शिष्य परम्परा कालान्तर में घराना एवं घरानेदार संगीत का महत्वपूर्ण स्थान है। घरानेदार संगीत ही भारतीय शास्त्रीय संगीत की नीव है, जिसके आधार पर शास्त्रीय संगीत आज वर्तमान में भी व्याप्त है। इसीलिए घरानेदार संगीत भारतीय शास्त्रीय संगीत की प्रतिष्ठा का आधार माना जाता है। घरानेदार संगीत को 'परम्परा' या परम्परागत संगीत का पर्याय भी कहा जा सकता है। संगीत की परम्परा में ही उसकी आत्मा है। शायद संगीत की आत्मा को परम्परा के बिना पहचाना नहीं जा सकता है।

घराने की उत्पत्ति

प्राचीन काल का संगीत शुद्ध शास्त्रीय संगीत था– स्वामी प्रज्ञानानन्द कृत ''भारतीय संगीत का इतिहास'' के अनुसार ग्रामगेय–गान से ही वैदिकोत्तर गन्धर्व या मार्ग संगीत का एवं मार्ग संगीत से क्रमशः देशी व क्रमशः शास्त्रीय गान पद्धति का विकास हुआ। तत्पश्चात् मार्ग व देशी संगीत का परिष्कृत रुप क्रमशः रामायण, महाभारत काल, वेदपुराण, मार्य एवं बौद्ध काल, गुप्तकाल एवं हर्षवर्धन युग तक सामने आता गया। ई0 सन् 650 तक भारतीय शास्त्रीय संगीत उन्नति के शिखर पर पहुँच चुका था। परन्तु राजपूत काल में कलाकारों की कुत्सित मनोवृत्ति के कारण भिन्न–भिन्न घरानों का जन्म हुआ। इन घरानों के जन्म से संगीत में इसका गहरा प्रभाव पड़ा, लेकिन यह कभी हद तक सत्य जान पड़ता है, कि विभिन्न रुपों में कलाकारों का बिखराव उनकी एक अलग व नई परम्पराओं की उत्पत्ति है।

घराने का अर्थ

घराना शब्द का संगीत में अर्थ एक घर से लिया गया है और दूसर अर्थ में घराने का तात्पर्य विशिष्ट गुरु परम्परा से भी होता है। घराने की प्रथा संगीत के सभी प्रकारों में पाई जाती है। गायन, वादन तथा नृत्य इन तीनों में ही घरानों की प्रथा रही है। ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी जैसी शैलियों में भी गायकी के विभिन्न अंगों के भिन्न–भिन्न रुप विकसित हो चुके है।

जिस तरह उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में घरानों का प्रचलन है। उसी प्रकार दक्षिण में भी इसका प्रभाव है। उत्तर में ''घराना'' एवं दक्षिण में ''सम्प्रदाय'' कहा जाता है। कला एवं साहित्य के क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के सम्प्रदाय पाये जाते है। इन्हें पाश्चात्य देशों 'स्कूल्सू' के नाम से जाना जाता है। उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में इन्हें 'मत' या 'वाद' के नाम से जाना जाता है।

प्राचीनकाल के संगीत में शिवमत, ब्रह्मत, भरतमत जैसे विभिन्न सम्प्रदाय थे। दत्रिल, कोहल एवं मतंग मुनि, भरत मुनि व अभिनव गुप्त आदि इन्ही सम्प्रदायों के अनुयायी थे। सम्प्रदाय विहीन कुशल गायक, वादक या

नर्तक सम्मान का पात्र नहीं माना जाता था। संगीत में गायकी व नायकी दोनों को समान महत्व दिया गया हैं नायकी का सम्बन्ध किसी कलाकार के व्यक्तित्व कला कौशल से और नायकी का सम्बन्ध उसकी ''गुरु शिष्य परम्परा अर्थात् 'सम्प्रदाय' से होता है।

घराना गुरु व शिष्य के परस्पर संयोग से बनता है। गुरु शिष्य की परम्परा संगीत में कला व शास्त्र पक्ष दोनों में ही समान रुप से निहित है। संगीत कला की योग्यता की कसौटी परख संगीत रसिकों के सामने प्रदर्शन करने में तथा संगीत शास्त्र में योग्यता की कसौटी विद्वानों के पारितो"ा में है। ''भरताचार्य ने आचार्य के अनेक गुणों में एक गुण 'शिष्य–निष्पादन' बताया है।''

सुयोग्य शिष्य ही गुरु शिष्य परम्परा'' को सुरक्षित एवं पीढ़ी–दर–पीढ़ी बढ़ाने में सक्षम रहे है। इसी कारण आचार्य अर्थात् गुरु की यही अपेक्षा रहती है, कि शिष्य ज्यादा से ज्यादा अच्छे व योग्य बन पायें। तात्पर्य यह है कि शिष्य को तैयार करने की क्षमता आचार्य में रहती है। विद्यादान करने वाले गुरु और प्रतिभाशाली शिष्य के होने पर ही ''सम्प्रदाय'' या घराने की सृष्टि होती है।

घराना ''रीति'' या ''शैली'' का दूसरा नाम है किसी प्रतिभाशाली गुरु में कला के अन्तर्गत कोई विशिष्ट गुण हुआ करते है, और वही गुण गुरू अपने पुत्र व शिष्यों को प्रदान करते हे। कला अनन्त एवं अपार है, सौन्दर्य इसकी आत्मा है। कला वह ज्योति है, जो आत्मा व परमात्मा के संयोग से उद्दीप्त होती है। मनुष्य की प्रकृति एवं संगीत की अनन्त साधना से विशिष्ट कला की दृष्टि होती है, तथा कला की निरन्तर साधना से ही संगीत में सौन्दर्य की सृष्टि होती है।

अपने शोध प्रबन्ध में डॉ0 आवान ए0 मिस्त्री लिखती है– ''घराने का मुख्य नियम, ध्येय, आचरण और रीति–रिवाज उसके समय की राजकीय या सामाजिक परिस्थिति तथा उसके मूल प्रवर्त्तक की अपनी वृत्ति, संस्कार और संस्कृति पर आधारित होती है। यही कारण है, कि घराने के मूल प्रवर्त्तक की छाप उसके पीढ़ी–दर–पीढ़ी के कलाकारों की कला में स्पष्ट दिखाई देती है।

स्वलिखित पुस्तक ''इंडियन म्यूजिकल ट्रेडीशन'' मे श्री वी0एच0 देश पाण्डे लिखते है, कि ''एक घराने में कलाकारों की परम्परागत शैली चलते रहने पर भी प्रत्येक व्यक्ति विशेष का उसमें योगदान रहता है, जो उसकी नियमबद्ध परम्परा को संभालते हुए पीढ़ी–दर–पीढ़ी उसे सजीव व समृद्ध बनाता है।

घराने का सूत्रपात तभी सम्भव ह जबकि घराने की शैली में कोई विलक्षणता हो या शैली की प्रकृति में कोई अनोखापन हो। शैली में अनोखापन ही घराने का विशिष्ट लक्षण होना है।

घराने का विकास

घराने की नीवं राजपूत काल में पड़ी एवं उसका विकास मुगल काल में हुआ। संगीत के इतिहास में 13 वीं शताब्दी से लेकर अकबर के शासनकाल तक का समय महत्वपूर्ण माना गया है। विशेष रुप से 13 वीं शताब्दी, क्योंकि 13 वीं शताब्दी में अमीर खुसरों कव्वाली एवं तराना गायकी को लेकर भारत आए थे। इसी काल में ख्याल गायकी एवं तबला–वादन भी प्रारम्भ हुआ।

मुगलकाल सन् (1525 से 1707 तक) में भारतीय घरानेदार संगीत का बहुमुखी विकास हुआ। इसी काल में ग्वालियर घराना, सेनिया घराना, लखनऊ आदि कई घरानों की नीवं पड़ी। धीरे–धीरे इन्ही घरानों से अनेक शिष्य समुदायों द्वारा घरानों का निर्माण हुआ तथा घरानेदार संगीत का प्रचार–प्रसार हुआ। मुगलकाल में भारतीय शास्त्रीय संगीत के बहुमुखी विकास के स्वरुप आज भी प्रचलित है। परन्तु उस समय संगीत स्तुति–आराधना के स्थान पर भौतिक मनोरंजन का साधन बनकर रह गया था।

प्राचीन गायक ध्रुवपदों में देवी–देवताओं की रचनायें गाते थें। इसके पश्चात् धीरे–धीरे राजाश्रय गायक अपनी रचनाओं को राजा–महाराजाओं के गुणगान, उनकी समृद्धता व शुभकामना में समर्पित करने लगे। गायक नायक–नायिकाओं के रुप वर्णन व प्रेम प्रंसगों पर आधारित ध्रुवपदों की रचनाएँ संगीत में गाने लगे। घरानेदार शास्त्रीय संगीत पर इसका ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ा। घराने के शिष्य समुदाय कुछ परिस्थितियों के दास होकर अन्य घरानों की शरण में आए। इससे एक ही घराने से कई घरानो का निर्माण ही नहीं वरन् इनकी शाखा, प्रशाखायें बढ़ती गयी।

ख्याल गायकी के विभिन्न घराने

उत्तर भारतीय संगीत मे सदियों से विभिन्न प्रकार की गायन शैलियाँ प्रचलित रही व उन शैलियों के अुनसार अलग–अलग घरानों की नीव पड़ी। कहा गया है कि–

''ध्रुपद गायन में ''बानियाँ'' प्रमुख है
ख्याल गायन में ''घराने'' प्रमुख है।''

प्रारम्भिक युग में भारत के सम्राट मोहम्मद दशाह रंगील के दरबारी कलाकारों सदारंग–अदारंग नामक दो भाईयों ने इसकी नीव डाली। उन्हीं में से एक घराना बना। जिससे आगे चलकर विभिन्न श्रेष्ठतम विशेषताओं को लेते हुए, अनेक घरानों का निर्माण हुआ। जैसे ग्वालियर, आगरा, पटियाला, किराना, दिल्ली, लखनऊ, जयपुर, भिण्डी बाजार, रामपुर, मेवाती इत्यादि। परन्तु इन सब घरानों में दिल्ली, लखनऊ एवं ग्वालियर घराना सबसे प्राचीन है।

दिल्ली घराने की विशेषातायं

दिल्ली के सम्राट बहादुर शाह ज़फर ख्याल गायकी के पोषक तथा रचियता थे। इन्ही के गुरु मियॉ अचपल (गुलाम हुसैन) दिल्ली घराने के संस्थापक माने जाते है। ख्याल गायकी का दिल्ली घराना सबसे प्राचीन है। दिल्ली के बादशाह मोहम्मद शाह रंगीले के दरबार में ख्याल गायकी का जन्म हुआ। उनकी सभा में नियामत खॉ, 'सदारंग' व फिरोज खॉ, 'अदारंग' ख्याल गीतों एवं ख्याल गायकी के निर्माता रहे। इनकी गीत रचनाएँ मोहम्मद शाह रंगीले'' एवं ''मौमदसापिया सदा रंगीले'' के नाम से उनके समय से लेकर आज तक प्रसिद्ध है।

इसी घराने की एक उपशाखा महाराष्ट्र में ''गोखले'' घराने के नाम से प्रचलित है। इस शाखा के मूल पुरुष रज़ा खॉ थे, जो कि अवध घराने के संस्थापक व दिल्ली के सदारंग के वंशज थे। दिल्ली घराना ही आगे चलकर अवध तथा दिल्ली दो भागों में विभक्त हो गया।

इस घराने में मूल रुप से सारंगियों से सम्बन्ध होने के कारण विलम्बित लय में मीड़, गमक, सूत, एवं

लहक का काम विषे"ा रुप से दिखाई देता है। गायकी अंग में सन्दर स्वरों का मेल करके कलात्मक रुपों का प्रयोग, तान एवं लय पर अधिकार, महज लय में स्वरों का आपसी जोड़ तोड़ का काम, तानें जटिल, कठिन व पेचदार है, द्रुत लय में तानों का प्रयोग, इस घराने की मुख्य विषे"ातायें है। इस घराने के मुख्य प्रतिनिधि कलाकारों में उस्ताद चॉद खॉ एवं उस्मान खॉ माने जाते है।

ग्वालियर घराना

ग्वालियर घराने का प्रादुर्भाव नत्थनपीर बख्श से माना जाता है। मूलतः यह लखनऊ की देन हैं। क्योंकि लखनऊ के गुलाम रसूल इस परम्परा के मूल पुरूष माने जाते थे। इनकी बानी, कब्वाल व इनके घराने 'कब्बाल' बच्चों का घराना'' कहा जाने लगा। नत्थन पीर बख्श, गुलाम रजा के प्रपोत्र थे। इनकी शिक्षा –दीक्षा अपने पिता मक्खन खॉ के द्वारा हुई थी। नत्थन पीर बख्श लखनऊ के अनुचित वातावरण को देखकर ग्वालियर के आश्रय में चले गए। ग्वालियर दरबार के हदृ खॉ व हस्सू खॉ इन्ही के पौत्र थे। नत्थन पीर बख्श की शिष्य परम्परा से ग्वालियर घराने का प्रचार–प्रसार देश के हर क्षेत्र में विस्तार से हुआ। इस घराने के विकास में अनेक बड़े कलाकारों, गायक गायिकाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

ग्वालियर घराने की विशेषाताएँ

प्रारम्भिक स्वर आकार में खुला व बुलन्द लगाया जाता है। आवाज दबाना निि"द्ध माना जाता है। ध्रुपद अंग के ख्याल गाये जाते है।

स्वर साधना की दीक्षा तीनों सप्तकों में दी जाती है। बोलतान एवं अन्य प्रकार की अनेक तानों को गाने की प्रथा है।

दानेदार व पल्लेदार तानों की विशेषता है। सीधी तथा सपाट तानें गाई जाती है।

गमक व जबड़े की तानों का सुन्दर प्रयोग होता हैं

नोम्– तोम् में आलापचारी है।

इस प्रकार ग्वालियर घराने की गायकी धीर–स्थिर, गम्भीर डौलदार व आकर्षक होती है। इस घराने में मुख्य कलाकारों में श्री लक्ष्मण राव, कष्ण राव पंडित जी है।

निष्कर्ष

घराने की सोमाओं में गायकों तथा उनके शिष्यों को एक रीति या शेली तक ही सीमित रखा जाता था क्योंकि उस समय (प्राचीनकाल) संगीतकार शिक्षित नहीं होते थे अतः उनमें मानसिक संकीर्णता एवं स्वार्थपरता रहती थी। अपनी इन्हीं भावनाओं के कारण वे अपने शिष्यों को सिर्फ अपनी ही सिखाई गई चीजों को गाने व अभ्यास करने के लिये बाध्य करते थे। घराने की सीमाओं के वि"ाय वस्तु पर डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री लिखती है। कि ''घरानों का अपना महत्व जरूर है परन्तु एक ही घराने की सीमाओं में न सिमटकर उससे आगे जाकर सभी घरानों की अच्छी चीजों को जानना चाहिये। अलग–अलग किस्म के फलों से सजा गुलदस्ता ही खूबसूरत लगता है। ''आज की परिस्थतियों को देखते हुए गुरु शिष्य परम्परा एवं घरानेदार गायकी अवश्य ही सुन्दर आकर्षक व प्रतिष्ठापरक लगती है। घराने के नाम से नीरस गायकी, गान की अपेक्षा विभिन्न घरानों के गुणों को संजोकर स्वतन्त्र रुप से सम्पन्न तथा समृद्ध गायकी गाना ही सर्वाधिक क्षेयस्कर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भारतीय शिक्षण प्रणाली एवं उसका वर्तमान स्तर डॉ0 मधुवाला सक्सैना।
2. भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण–डा0 स्वतन्त्र शर्मा
3. भारतीय संगीत – राम अवतार वीर
4. ग्वालियर घराना – राम अवतार बांगरे
5. आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत – डा0 हुकम चन्द
6. रामपुर की सदारंग – परम्परा और प्रतिनिधि आचार्य–बृहस्पति – सरयू कालेकर